Indian Streams Research Journal
International Recognized Multidisciplinary Research Journal

ISSN 2230-7850 Impact Factor : 3.1560 (UIF) Volume - 6 | Issue - 1 | Feb - 2016

कमलेश्वर की रचना–प्रक्रिया

डॉ.दुर्गावती सिंह
असि.प्रो.हिंदी,आर्य महिला डिग्री कालेज,शाहजहाँपुर.

प्रस्तावना :

'साहित्य समाज का दर्पण है।' – महावीर प्रसाद द्विवेदी
'रचना जीवन की पुनर्रचना है।'– मुक्तिबोध

जब हम किसी रचनाकार की रचना अथवा साहित्य तथा साहित्य में विकसित विभिन्न विधाओं की रचना–प्रक्रिया की बात करते है तो वह एक विचारणीय प्रश्न अपने ज्वलंत रूप में आज भी उपस्थिति हो जाता है कि रचना का जुड़ाव समाज से है या जीवन– जगत से। बात स्पष्ट है कि कुछ चिंतक रचना को समाज से संबद्ध कर देखते हैं तो कुछ रचना को जीवन–जगत से जोड़कर। समझने की बात यह है कि जगत से ही जीवन संचालित और स्पंदित होता है। इससे यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि जीवन जिसे हम मानव जीवन कहते हैं उसी से समाज की निर्मित होती है। मनुष्य जीवन जगत से पहले जुड़ता है और समाज से बाद में। क्योंकि समाज की निर्मिति मनुष्य के बौद्धिक चिंतन से होता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जिसे 'जनता' कहकर संबोधित किया है, वह वास्तव में 'मनुष्य' या 'मानव' का ही प्रतिरूप है। मनुष्य की चित्तवृत्तियों के परिवर्तन के आधार परिवे''ा ही होते हैं। परिवेश के बदलने पर मनुष्य (जनता) की

चित्तवृत्तियों अथवा संस्कारों में बदलाव हो जाता है। परिवेशगत जो बदलाव होते हैं वे जीवन जगत और समाज से संबद्ध होते हैं इससे इतर बदलाव या परिवर्तन का कोई मुद्दा कम से कम मनुष्य जीवन व समाज में देखने को नहीं मिलतां इसी संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का यह कथन– ''जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में परिवर्तन होता चलता है।'' कहना न होगा कि हिंदी साहित्य की विविध विधाओं की रचना–प्रक्रिया में जो परिवर्तन आज हमें विभिन्न स्तरों या आयामों में दिखाई पड़ता है, वह जनता की चित्तवृत्तियों के परिवर्तन के कारण ही है। जब भारत में प्रोद्यौगिकी विकास नहीं हुआ था, उद्योग–धंधों की कमी थी। कृषि भी उतनी उन्नतशील नहीं थी जितनल आज है तो मनुष्य के पास समय ही समय था। खाली समय में भारी भरकम मोटी पुस्तकें पढ़ने में लोग रुचि लेते थे, लेकिन जैसे–जैसे देश में विकास की गति तेज हुई, लोगों का समयाभाव होने लगा तो लोग छोटी–छोटी पुस्तकों को पढ़ने में रुचि लेने लगे। उपन्यास से कहानी की ओर लौटने की पूरी कथा देश के विकासात्मक परिवर्तन की ही देन है। यही कारण है कि लोगों को कहानी पढ़ने का समय है उपन्यास पढ़ने का नहीं। यह उपन्यास यात्रा के दौरान पढ़े भी जा रहे हैं तोजासूसी और एय्यारी। मात्र शिक्षक या साहित्य से जुड़े लोग ही दोनों प्रकार की पुस्तकों को पढ़ रहे हैं।

जब हम किसी कथाकार की रचना–प्रक्रिया पर विचार करने चलते हैं तो कुछ प्रश्न हमारे समक्ष खड़े हो जाते हैं – प्रथम कथाकार के रचना काल में समय और समाज का क्या रूप था? दूसरा कथाकार के वस्तु

चयन और दाकी प्रस्तुति का स्वरूप क्या था? तीसरा कथाकार की मुख्य संवेदना किस प्रकार की थी और चौथी वस्तु–संवेदन की प्रस्तुति का शिल्प (भाषा–शैली) कैसी थी? देखा जाय तो कमलेश्वर एक ऐसे कथाकार थे जिन्होंने समकालीन कथा–चेतना को ऐ नई दृष्टि और दिशा प्रदान की थी। उन्होंने समकालीन परिवेशगत परिवर्तनों को भली भाँति अपनी चक्षुओं से निहारा था और उसका गहन एहसास भी किया था। वे समय और आदमी की चिंताओं और समस्याओं से जुड़े व्यक्ति थे। वे समाज के निम्न और निम्नमध्यवर्ग से संबद्ध व्यक्ति थे इसलिए वे उनकी संवेदनाओं के प्रति जागरूक थे। उन्होंने पंराणपंथी आध्यात्मिक और पुरोहितवादी तथा सामंतवादी पूँजीवादी व्यवस्था का खुलकर विरोध किया और मार्क्सवादी, जनवादी विचारधारा को अपने जीवन दर्शन के रूप में प्रतिष्ठापित किया। इसी दौरान बाबू राव बागूल ने रूखर और दया पवार आदि से वे जुड़े और उनके दलित–चिंतन से इतने प्रभावित हुए कि आगे चलकर वे दलित–विमर्श के प्रमुख हस्ताक्षर बन बैठे। फिर जब नारी–विमर्श का मुद्दा उठा तो उसे भी उन्होंने अपने कथा–साहित्य में स्थान देना प्रारम्भ कर दिया। वे बतौर लेखक भाषा, धर्म, समाज और साहित्य की ज्वलंत समस्याओं से जुड़े थे। वे समाज के वर्णात्मक विभाजन को गैर कानूनी और महत्वपूर्ण नहीं मानते थे। वे राष्ट्र–चेतना के विकास के पक्षधर थे। 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास इसका श्रेष्ठ उदाहरण है। यह एकराष्ट्रीय ही नहीं, बल्कि एक अतंरराष्ट्रीय उपन्यास हैं जिसमें भेद–भाव नीति को खारिज कर समान अधिकार की बात को महत्व दिया गया है। वे मीडिया और साहित्य के पारस्परिक संबंधों के सच्चे वाहक थे। नेमिचंद्र जैन ने उन पर टिप्पणी करते हुए लिखा है – ''कमलेश्वर आधुनिक और उत्तरआधुनिक समय और समाज की विविध समस्याओं, संवेदनाओं, प्रश्नों, चुनौतियों, विद्रूपताओं एवं यंत्रणाओं की अभिव्यक्ति देने में पूर्णतः सक्षम रहे। वे एक ऐसे कथाकार थे जिन्होंने मानव समाज और जीवन में व्याप्त विषमताओं, उत्पीड़नों, अत्याचारों, अन्यायों और शोषणों के प्रति लेखनी चलाई, यह काबिले तारीफ है।'' कमलेश्वर के कथा–साहित्य में सीधे तौर पर समकालीन समय, समाज और जीवन एकीकृत होकर रचना–प्रक्रिया के अंग बन गये हैं। डाक बंगला, तीसरा आदमी, लौटे हुए मुसाफिर, समुद्र में खोया हुआ आदमी, काली आँधी, सुबह दोपहर शाम, रेगिस्तान, कितने पाकिस्तान, वही बात, कोहरा, कथाव्रत और उनकी कहानियों में समय के साथ उत्पन्न समस्याओं, विद्रूपताओं, जटिलताओं, संवेदनाओं, शोषण–वृत्तियों के साथ सामाजिक–पारिवारिक विघटनों, पुरुषों पूँजीपतियों द्वारा शोषित उद्यमों, शोषक कृयों और आर्थिक असमानताओं तथा राष्ट्रीय स्तर एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर की समस्याओं (आंतकवाद,उग्रवाद, नस्लवाद, तस्करी), आंदोलनों (दलित एवं नारी–विमर्श) को कथा–कहानी में अंतर्मुक्त किया गया है। जीवन जगत एवं समाज के जो चित्र उनके कथा–साहित्य में उकेरे गये हैं वे देखे, अनुभव किये गये यथार्थ हैं। उनके यथार्थ चित्र मनुष्य को मनुष्य बनाने का कार्य करते हैं, क्योंकि प्रत्येक उपन्यास और कहानी में मनुष्य को जागरूक किया गया है कि 'बुरा कर्म का परिणाम बुरा ही होता है'।

कमलेश्वर के उपन्यासों एवं कहानियों की रचना–प्रक्रिया के तहत जिस वस्तु (कथा) को प्रक्षेपित किया गया है वह बाह्यीकरण का आभ्यांतरीकरण रूप है जिसे मूर्तिकरण और अमूर्तिकरण कह सकते हैं। इस आभ्यांतरीकरण वस्तु रूप को कमलेश्वर ने कथा–कहानी रूप में प्रस्तुत कर बाह्यीकरण कर दिया है। इसी को हम अमूर्तिकरण का मूर्तिकरण कह सकते हैं। बिना वस्तु के मूर्तिकरण रूप में आये रचना आस्वादित नहीं हो सकती। इसी मूर्तिकृत वस्तु से कथा–कहानी के पात्र जुड़े होते है। जो इसी समाज व जीवन से जुड़े होते है। इसीलिए ये पात्र मात्र पात्र ही नहीं होते, बल्कि वे प्रतिनिधि पात्र व चरित्र होते हैं। ये पात्र यथार्थ पात्र होते, बल्कि उनकी समस्याएं व संवेदनाएं मनुष्य की समस्याएं और संवेदनाएं बन जाती हैं। कमलेश्वर के सभी कथा–कहानी के पात्र यथार्थ स्थिति–बोध से जुड़े है। वीरेंद्र सक्सेना का कथन है, ''कमलेश्वर के कथा–साहित्य का वस्तु–विन्यास यथार्थ का दस्तावेज है, काल्पनिकता उनके वस्तु–विन्यास को दूर–दूर तक स्पर्श नहीं कर पाता।''

कथा–साहित्य की रचना–प्रक्रिया के लिए कलात्मक विवके का होना जरूरी होता है जो कमलेश्वर में है। यही कलात्मक विवके आगे चलकर रचनाकार की जीवन पद्धति (जीवन दर्शन) बन जाती है। कथाकार की जीवन पद्धति ही वह विचारधारा है जिसके बल पर वह वस्तु और पात्र का संयोजन करता है। कलात्मक विवके के दो ही आधार हैं – भाव–समृद्धि और अभिव्यक्ति क्षमता। कमलेश्वर ने अपने सभी उपन्यासें और कहानियों में भाव–समृद्धि और अभिव्यक्ति क्षमता को महत्व दिया है। कलात्मक विवेक समय, समाज और जीवन–जगत बोध से बनता है जो बहुआयामी होता है। भाव इसी अनुभव बोध से सबल होता है। यही अनुभव बोध आत्मानुभूति है जो कथा–कहानी में सामान्यानुभूति बनकर संप्रेषित होती है। कमलेश्वर की सामान्यानुभूति में अनुभूति वस्तु तत्व और अभिव्यक्त वस्तु तत्व का अच्छा संयोजन हुआ है। माधुरी शाह एक स्थान पर लिखती

हैं,''कमलेश्वर के कथा–साहित्य का सामान्यानुभूति इतना प्रभावित करने वाला है कि उसका प्रत्येक पात्र प्रासंगिक हो उठता है।'' यही सामान्यानुभूति रसानुभूति का आधार बनता है जिससे पाठक द्रवीभूत हो उठते हैं।

कमलेश्वर के कथा–साहित्य से जुड़े सभी पात्र समय, समाज, इतिहास और जीव जगत यानी जमीन की जद्दोजहद से निकलकर अथवा उसमें जूझते–भिड़ते, लड़ते–हारते–जीतते नजर आते हैं। उपन्यास या कहानी का वस्तु हो या पात्र, वे उनके अच्छे या बुरे होने की अपेक्षा उसकी सार्थकता या निरर्थकता पर गहराई से चिंतन–मनन करते हैं और उसी कथा को तहजीब देते हैं जिसकी आज सार्थकता ज्यादा होती है। 'खोई हुई दिशाएं' और 'जोखिम' नामक कहानियाँ इसके प्रमाण है। 'कितने पाकिस्तान' के कथ्य और पात्र भी इससे अछूत नहीं है। लेकिन ऐसी कथ्य और पात्र को सहज ढंग से नहीं चयनित किया जा सकता। इसके लिए कलात्मक विवेक का होना आवश्यक है। जिसके द्वारा कथाकार अपनी रचना–प्रक्रिया को धार देता है। इसी धार से उपन्यास व कहानी की रूप–रचना को संगठित किया जाता है। किन्हीं कहानी की रचना–प्रक्रिया इतनी जटिल और संश्लिष्ट है कि कोशिश करने के बावजूद भी कथा स्पष्ट नहीं हो पाती। 'इतने अच्छे दिन' और 'दाल चीनी के जंगल' कहानियाँ इसी तरह की हैं। इसी तरह की कहानियों को कमलेश्वर ने 'अंतहीन अंतों की' कहानी कहा है।'

कमलेश्वर ने अपने कथा–साहित्य की रचना–प्रक्रिया को पूरा करने में दो बातों पर विशेष ध्यान देते हैं यथार्थ का अंकन और ईमानदारी। वे ईमानदारीपूर्वक अनुभवजन्य वस्तु व पात्र को सामान्य धरातल से उठाकर विशिष्ट बना देते हैं। यही सामान्यीकरण का विशिष्टकरण स्वरूप है जिसके आधार पर कथाकार समय, समाज, अतिहास, जीवन–जगत की पुनर्रचना करता है। लेकिल कथाकार कथा व कहानी की रचना करते समय विशिष्ट अनुभूति और विचार को सामान्य धरातल पर ही प्रस्तुत करता है तभी पाठक उसका आस्वाद ग्रहण करता है। जब तक कथ्य और पात्र उपन्यास व कहानी में सामान्य बनकर प्रस्तुत नहीं होंगे तब तक वे ग्रहणीय नहीं होंगे। सामान्यीकरण की इसी प्रक्रिया को मुक्तिबोध ने 'मूर्तिकरण' कहा है।' कहना न होगा कि कमलेश्वर ने पात्रों को सामान्यीकरण के माध्यम से संवेद्य और जीवंत बनाया है। पात्रों के जीवंत होने पर ही कथा जीवंत ओर सजीव बनती है। उनके उपन्यासों, कहानियों में जो सजीवता, जीवंतता दिखाई पड़ती है उसका प्रमुख कारण उनकी सामान्यीकरण की प्रक्रिया ही है।

कमलेश्वर कथा–कहानी की सृजनात्मकता के लिए तीन प्रकार के संघर्ष व द्वंद्व से गुजरते हैं– तत्व, दृष्टि–विकास और अभिव्यक्ति। कथा की निर्मिति के साथ तत्व की भी निर्मिति होती है। लेकिन यह निर्मिति यथार्थ अंकन से संभव है। काल्पनिकता से यह निर्मिति संभव नहीं होती। कहने का आशय यह नहीं कि कमलेश्वर के कथा–कहानी में कल्पना–तत्व है ही नहीं। उन्होंने कल्पना के सर्जनात्मक स्वरूप को ग्रहण किया है जो यथार्थ के ताने–बाने को समृद्ध करता है। यह कल्पना जीवन विवेक से जुड़ी होने के कारण सर्जनात्मक होता है जिसका उपयोग कमलेश्वर ने अपने उपन्यासों में ज्यादातर किया है। दृष्टि–विकास का जुड़ाव उस विचारधरा से है जिससे जुड़कर ही कमलेश्वर मार्क्सवादी, जनवादी कथाकार बनते हैं। यह विचारधारा जमीन से जुड़े–संघर्ष करते हुए उन शोषित जनों की है जो रोजी, रोटी, मकान की तलाश में जिंदगीभर भटकते और संघर्ष करते हैं। तीसरे प्रकार के संघर्ष का संबंध अभिव्यक्ति से है। यह अभिव्यक्ति कथा–कहानी के कथ्य को चित्रित करता है। इस चित्रण में भी कमलेश्वर को संघर्ष करना पड़ा है। इसीलिए एक बैठक में लिखी गई कहानियों के कथ्य उन्होंने कई बार बदले हैं जिससे यथार्थ चित्रण में सहजता और जीवनता आ सके। उन्होंने परंपरागत कहानी रचना–प्रक्रिया की अनेक वर्जनाओं और बंधनों को तोड़ा है जिसके लिए उन्होंने सतत् संघर्ष किया है। उनके चर्चा में बने रहने काप एक कारण यह भी रहा है। 'नई कहानी' और 'समान्तर कहानी' के निर्माण यही संघर्ष कार्यरत था।

कमलेश्वर के कथा साहित्य की रचनात्मकता में बुद्धि तत्व की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जीवन कौशल का ही नाम है – बुद्धि। वह जीवन ज्ञान व्यवस्था का ही अंग है। यही समय, समाज, इतिहास, जीवन–जगत को उपन्यास और कहानी में पुनर्रचित करता है। इस तत्व के अभाव में न तो शब्द–योजना को सही ढंग से संयोजित, संगठित और वर्णित किया जा सकता है और न अभिव्यक्ति कला को विकसित किया जा सकता है। कमलेश्वर के उपन्यास व कहानियों में जो संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदना की अनुभूति होती है उससे जीवन–मूल्यों की सर्जना होती है। समाज इन्हीं जीवन–मूल्यों से संवालिता होते हैं। इन जीवन–मूल्यों या मानव–मूल्यों के अभाव में ही समाज गलत फहमियों का शिकार बन जाता है जिससे वर्ग संघर्ष जातिगत संघर्ष, धर्मगत संघर्ष, रंगगत संघर्ष पनपते है। 'कितने पाकिस्तान' में संघर्ष के विविध आयामों और उसके परिणामों तथा उससे जागरूक रहने का जो चित्रण किया गया है, वह हृदय–विदारक, मर्मान्तक के साथ–साथ मनुष्य जाति के

लिए कलंक और सोच्य है। 'नई कहानी' के आंदोलन को प्रमुख रूप देने वाले मोहन राकेश, राजेंद्र यादव और कमलेश्वर ही हैं लेकिन इस आंदोलन का सबसे अधिक विरोध कमलेश्वर को ही सहना पड़ा। उन्होंने 'नई कहानी' की रचना–प्रक्रिया के सैद्धांतिकी का जो तर्क संगत विश्लेषण किया, वह उनके बौद्धिक क्षमता का प्रमाण है। उनकी पुस्तक 'नई कहानी की भूमिका' वह मील का पत्थर है जिससे 'नई कहानी' को व्याख्यायित किया गया है।

'कथा व कहानी की रचना–प्रक्रिया का अंतिम अस्त्र है अभिव्यक्ति कला। अभिव्यक्ति कला, भाषा–शैली के प्रयोग और संप्रेषण पर निर्भर होती है। कमलेश्वर ने अपनी कथात्मक भाषा की संरचना हेतु जिन शब्दों का वयन और प्रयोग किया है वे सामाजिक संवेदनों एवं सरोकारों से जुड़े हुए हैं। शब्द चाहें उर्दू के हों या हिंदी अथवा अंग्रेजी लेकिन यदि वे समाज द्वारा प्रयोगित हैं तो उन्हें ग्रहण करने में कठिनाई नहीं होती, वशर्ते वे संवेदनशील और यथार्थ–चित्रण के अनुकूल हों। वे सामूहिक सत्य से जुड़े शब्दों को अधिक महत्व देते हैं क्योंकि जब हम इस दुनिया से हटकर रचना की दुनियाँ में आते हैं तो वहाँ कोई नेता नहीं होता। किंतु कभी–कभी अपने मूल्यों को बनाने के लिए, संरक्षित करने के लिए पैरवी की जश्रत पड़ती है।' ऐसी पैरवी शब्दों के प्रति भी कमलेश्वर करते हैं। उनकी भाषा संवेदनपूर्ण और यथार्थ है। उनकी भाषा सामान्य है विशेष नहीं। इसीलिए उसमेंएक मिठास, प्रभाव और तेज है।

क्मलेश्वर के कथा–साहित्य के रचना–विधान की शैली कथात्मक है। 'नई कहानी' आंदोलन के समय उनकी शैली प्रवक्ता और भाष्यकार जैसी थी बाद में रूपांतरित होकर कथात्मक हो गई। 'पहिले उनकी शैली का रू॰ आंदोलनधर्मी था जो बाद में विकासात्मक रुख अख्तियार कर कथात्मक हो गई।' उनके कथन की शैली सामान्य और यथार्थ है। वे आडम्बरयुक्त और अतिश्योक्तिपूर्ण कथन–शैली को महत्वहीन मानते हैं। इलेक्ट्रानिक मीडिया से जुड़े रहने के कारण उनकी कथात्मक शैली में उर्दू जैसी सहजता आ गई है। उनकी शैली अपने अभिनव प्रयोग की मिशाल है। ऐसा प्रतीत होता है कि वे हिंदी, उर्दू और साहित्य का कथात्क इतिहास लिख रहे हैं। वे रोजगार की भाषा और शैली दोनों का विरोध करते हैं। वे रोजगार को किसी भी भाषा–शैली से जुड़ाव रखने के पक्षधर नहीं हैं। वे हिंदी भाषा और शैली में आजाद भारत के शोषित जनता के उत्थान एवं विकास को देखते है। उन्होंने एक इण्टरव्यू में साफ तौर कहा है, ''मैं तो आने वाले दिनों में हिंदी का भविष्य बड़ा उज्ज्वल देखता हूँ।'' हिंदी के बढ़ते हुए प्रयोग व प्रभाव से वे हिंदी लेखन को महत्व देते है। और अपने कथा–साहित्य की सृजनात्मकता के माध्यम से हिंदी भाषा और शिल्प के नित नये प्रयोग करते हैं। जिस तरह वे वैचारिक प्रतिबद्धता से जुड़े है। उसी प्रकार भाषा–शैली की स्पष्टवादिता से।

दरअसल, यदि ध्यान से देखा जाय तो कमलेश्वर ने हिंदी कथा–साहित्य के वस्तु संवेदन और शिल्प के स्तर पर जो स्थापत्य गढ़ा है, वह एक क्रांतिकारी कदम है। इस क्रांतिकारी कदम से भले ही लोग परिचित नहीं हैं लेकिन इसके बावजूद यह सत्यच है कि साहित्य की कोई भी विधा जड़ नहीं होती, वह लगातार अपनी सीमाओं को चुनौती देती हुई आगे बढ़ती है। कथ्य, संवेदन, भाषा और शिल्प के स्तर पर यदि उसमें परिवर्तन नहीं होता तो वह चेतनाहीन हो जायेगी।

अस्तु, कमलेश्वर के उपन्यासों में कथ्य, संवेदन, भाषा और शिल्प में जो परिवर्तन आये हैं वे मानवी चेतना को अभिवृद्धि करने वाले हैं। यही मानवी चेतना से मनुष्यता को विस्तार मिलता है। यही कमलेश्वर के कथा–साहित्य का सरोकार है।

संदर्भ :

1.आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ0 1
2.साक्षात्कार, अगस्त 2004, पृ0 2
3.कितने पाकिस्तान, कमलेश्वर, पृ0 3
4.कमलेश्वर का कथा–साहित्य, पृ0 170
5.आजकल 2007, पृ0 17
6.मुक्तिबोध रचनावली भाग–6, पृ0 314
7.आजकल, अप्रैल 2007, पृ0 13
8.वही, पृ0 27
9.वही, पृ0 29